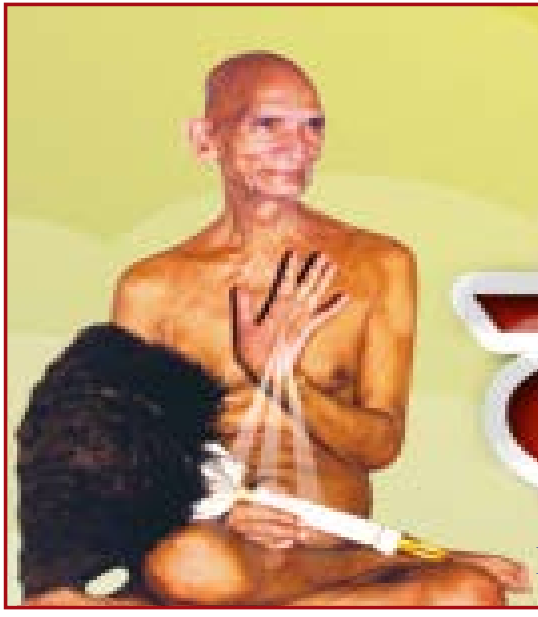

Issue: 145
31 August 2020
जैनाचार
www.jainachar.com Daily

Editor: Mamta Anil Gandhi - Mumbai 9619160611 / 9323804751

i- i- ftuèkel çHkkfodk xq: ek xf.kuh çKkJe.kh vkf;Zdk få‡ Jh 'kqHkerh ekrkthds 46 osa tUefnu fd gkfnZd 'kqHkdkeuk,¡

Hkfä dh jkg esa] iku ls [kkus dk etk dqN vkSj gS] xq# ek¡ ds fy, cnu vk¡[kksa ls] jkus dk etk dqN vkSj gS] vkl cus y¶t vkSj y¶t cus Hktu] vkSj mu Hktuksa esa xq#ek¡ ! rqjs gkus dk etk dqN vkSj gSA xq#ek¡ ds pj.kksa esa 'kr~ 'kr~ ueu

ij oLrqvksa ls vR;Ur yxko NksM+uk vkfdapU; èkeZ gS

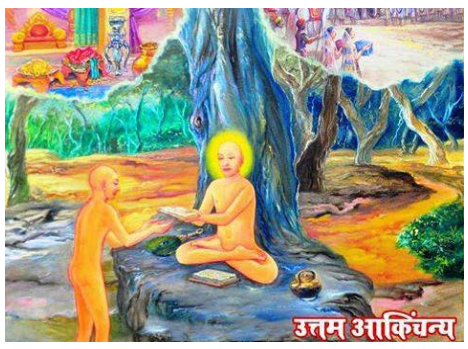

—डॉ. महेन्द्रकुमार जैन 'मनुजश, इन्दौर

आकिंचन्य यानि ममत्व का परित्याग करना है। मैं और मेरा का त्याग करना ही आकिंचन्य धर्म है। परिग्रह का परित्याग कर परिणामों को आत्मकेंद्रित करना ही आकिंचन धर्म माना गया है। अपने उपकरणों एवं शरीर से भी निर्ममत्व होना ही उत्तम आकिंचन्य धर्म है। बाह्य तथा अन्तरंग परिग्रह का पूर्ण त्याग होने पर आत्मा का अकिंचन होना आकिंचन्य धर्म है। आकिंचन्य का अर्थ अकेला होना है। किंचित मात्र भी मेरा नहीं ऐसी धारणा बन जाने पर यथार्थ त्याग और आकिंचन्य धर्म होता है। परिग्रह से ममता होने के कारण ही व्यक्ति समस्त प्रकार की अनीति करता है। परिग्रह की इच्छा से हिंसा करता है, झूठ बोलता है, चोरी करता है, कुशील भी सेवन करता है। परिग्रह के लिये मर जाता है, अन्य को मार देता है, महा क्रोध करता है। परिग्रह के प्रभाव से महान अभिमान करता है। परिग्रह के लिये अनेक मायाचार करता है। परिग्रह की ममता से महालोभ करता है। बहुत आरम्भ तथा बहुत कषाय का मूल परिग्रह ही है। जो सभी पापों में छूटना चाहता है, वह परिग्रह से विरक्त होता है। समस्त पापों का मूल कारण परिग्रह है, समस्त खोटे ध्यान परिग्रह से ही होते हैं। बाह्य परिग्रह–समस्त पापों का मूल कारण परिग्रह है, समस्त खोटे ध्यान परिग्रह से ही होते हैं। बाह्य परिग्रह तो अन्न–वस्त्र मात्र तथा रहने को कुटी मात्र नहीं होने पर भी यदि पर वस्तु में ममता (वांछा) सहित है तो वह परिग्रही ही है।

परिग्रह ग्रहस्थ और त्यागियों दोनों को छोड़ने को कहा गया है। परिग्रह भी दो प्रकार का है। बाह्य परिग्रह और अंतरंग परिग्रह। बाह्य परिग्रह दस प्रकार हा है–खेत मकान, धन–हाथी घोड़े, गाय आदि। धान्य–अनाज आदि, दासी दास, वस्त्र और वर्तन आदि इस सब का परिमाण अर्थात् इतना रखूगा इससे अधिक नहीं रखूगा यह नियम लेकर रखना, ये ग्रहस्थ के लिए अणुव्रत के रूप में कहा गया है। अब त्यागी–साधु के तो उपरोक्त सभी पहले से ही छूटे हुए हैं, उनके तो तन पर कपड़े तक नहीं हैं तो उनके लिए अन्तरंग परिग्रह कहे गये हैं। वे 14 प्रकार के हैं, मिथ्यात्व १, वेद २, राग ३, द्वेष ४, क्रोध ५, मान ६, माया ७, लोभ ८, हास्य ६, रति १०, अरति ११, शोक १२, भय १३ और जुगुप्सा १४ । मिथ्यात्व तो अनादिकाल से देहादि परद्रव्यों में ममत्वबुद्धि, एकत्वबुद्धिरूप परिणाम है। यह देह है वही मैं हूँ, जाति मैं हूँ, कुल मैं हूँ इत्यादि पर पुद्गलों में आत्मबुद्धि अनादि से ही लग रही है, वही बुद्धि मिथ्याबुद्धि है। रागद्वेषभाव, क्रोधादि भाव, मोहकर्म द्वारा किये गये भाव हैं। उन भावों में आत्मपने का संकल्प वही मिथ्यात्व परिग्रह है। काम से उत्पन्न विकार में लीन हो जाना, राग, द्वेष, क्रोध, मान, माया, लोभ और हास्य आदि छह नो कषायों में आत्मपने का भाव रखना वह अंतरंग परिग्रह है। जिसके अंतरंग परिग्रह का अभाव हुआ है। उसके बाह्य परिग्रह में ममता नहीं होती है।

महात्मा बुद्ध के शिष्य आनंद ने परिग्रह परिमाण व्रत लिया अर्थात् उसने अपनी सभी तरह की संपत्ति का एक नियम लिया कि ये ये वस्तुएं इतनी से अधिक नहीं रखूगा। गौशाला में उसके नियम से अधिक गायें बढ़ने लगी तो उसने अतिरिक्त गायें दान करना प्रारंभ कर दींखेतों से अनाज परिमाण से अधिक आने लगा तो उसने धान्य दान करना प्रारंभ कर दिया। व्यापार में मात्रा से अधिक आय होने लगी तो धन दान करने लगा। इससे उसकी ख्याति राजा से भी अधिक बढ़ गई थी, अतः उत्तम आकिंचन्य धर्म ग्रहस्थों को शिक्षा देता है कि सीमा से अधिक की धन–संपत्ति, मकान–दुकान में ममत्व न रखें और साधुओं का उनके ही प्रति इस धर्म से संदेश है कि राग–द्वेष, लगाव, कषाय भय से दूर रहें यहां तक कि उनका हँसना भी परिग्रह में आता है, हास्य से भी वे दूर रहते हैं। हम सब यथाशक्ति इस धर्म का अनुपालन करें।

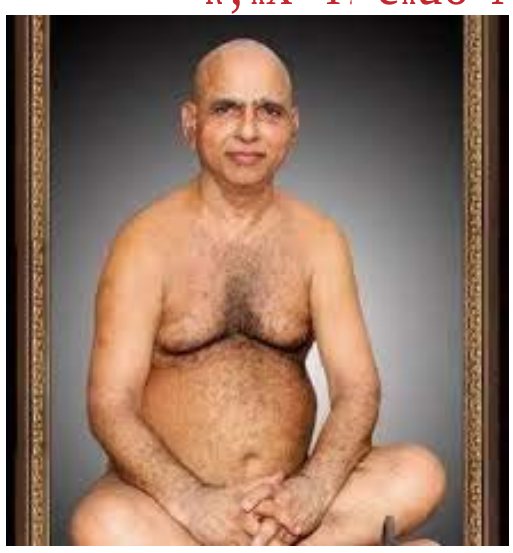

efä dk dkj.k R;kx èkeZ gS] vkpk;Z cfgjax ifjxzgksa dk R;kx mÙke R;kx èkeZ gS] R;kx ls ekuo Åij mBrk gS

पंचम पट्टाधीश वात्सल्य वारिधि आचार्य श्री वर्धमान सागर जी की संघस्थ आर्यिकाश्री निर्मुक्तमति माताजी ने त्याग धर्म के बारे में प्रवचन में बताया कि श्री उमास्वामी ने सातवें अध्याय में दान के बारे में बताया है चार प्रकार के दान हैं। दान देने से रत्नत्रय की वृद्धि होती है यदि आहार दान महावत्री आचार्य परमेष्ठी साधु परमेष्ठी को दिया जाता है तो दाता को चारों प्रकार के दान के आहार दान का लाभ मिलता है।

माताजी ने प्रवचन में बताया कि भगवान महावीर स्वामी की बैंक बीमा कंपनी है जिसके जीवन बीमा के एजेंट आचार्य श्री वर्धमान सागरजी हैं यहां आकर आप घर का त्याग करो धन का त्याग करो। इसका लाभ इस गति में भी मिलेगा और आगे भी मिलेगा यहां संघ में आकर आप वृत्ति बने अनुवत्री बने। महावत्री बने तो आपका उत्कृष्ट समाधि मरण भी होता है।

संग्रह करेंगे तो पतन होगा बादल देता है इसलिए ऊपर है, सागर लेता है इसलिए नीचे है। पंचम पट्टा धीश वात्सल्य वारिधि आचार्य श्री वर्धमान सागर जी ने त्याग धर्म के बारे में विवेचना कर बताया कि भारतीय संस्कृति में जैन संस्कृति हमारे वितराग सर्वज्ञ भगवान की संस्कृति है।

वीतरागता मुक्ति और मोक्ष का संदेश देती है इसमें त्याग का बड़ा महत्व है। आचार्य श्री कुंदकुंद देव ने बताया कि जो द्रव्य के मोह को छोड़ कर संसार भोग परिग्रह से दूर रहता है। उसका उत्तम त्याग होता है अर्थात अप्राप्त भोगों की इच्छा नहीं करना तथा प्राप्त भोगों से विरक्त होना सच्चा त्याग है। उत्तम त्याग के लिए अनावश्यक वस्तुओं का परिग्रह का त्याग करना चाहिए निश्चय से राग द्वेष छोड़ना चाहिए। चेतन अचेतन मिश्र परिग्रहों को छोड़ना त्याग धर्म है पात्रों को दान देना त्याग धर्म है। आचार्य श्री आगे बताते हैं कि समस्त परीग्रह का त्याग सर्व देश त्याग है और परिग्रह का त्याग एक देश त्याग है।

आचार्य श्री ने मुनिराजों के 14 अंतरंग तथा 10 बहिरंग परिग्रहों बाबत बताया, आचार्य श्री वर्धमान सागर जी ने दान के चार प्रकार का वर्णन किया ज्ञानदान, आहार दान, अभय दान और औषधी दान। श्रावक को राग द्वेष से निवृत्ति कर पुण्य का अर्जन करना चाहिए। श्रावक को नवधा भक्ति से आहार दान देना चाहिए नवधा भक्ति में आचार्य श्री ने बताया कि साधु का पड़गाहन, उच्चासन, पाद प्रक्षालन, पूजा। नमस्कार, मन शुद्धि, वचन शुद्धि, काय शुद्धि, आहार जल, शुद्धि, यह नवधा भक्ति में आता है। आचार्य श्री ने बताया कि प्राणी को मन वचन काया से पीड़ा नहीं पहुंचाना चाहिए। दश लक्षण पर्व हमें संदेश देता है कि क्रोध को अगर हम समाप्त करते हैं तो क्षमा भाव प्रकट होता है। मान कषाय को हटाने से मार्दव धर्म प्रगट होता है माया का अभाव करेंगे तो आर्जव धर्म की उत्पत्ति होती है। मिथ्या गलत असत्य बात नहीं करेंगे तो सत्य धर्म की प्राप्ति होती है और लोभ लालच हटाने से संतोष शोच धर्म की प्राप्ति होती है। व्यक्ति को श्रावक को विकारी राग द्वेष को दूर कर त्याग करना चाहिए। त्याग की महत्ता बताते हुए आचार्य श्री कहते हैं कि पदार्थ का भार हल्का होता है तो वह ऊपर उठता है। पदार्थ भारी होता है तो वह नीचे रहता है, शरीर भी त्याग चाहता है अगर शरीर में जगह नहीं होगी तो व्यक्ति रोगी हो जाता है। शरीर रोगी हो जाता है तो उसे भी फिर स्वस्थ होने की जरूरत होती है।

लोक में यश स्थिर रहता है दान में ही जीवन की सार्थकता है। आचार्य श्री ने राजा श्रेयांश का उदाहरण दिया कि उन्होंने प्रथम तीर्थंकर श्री आदिनाथ मुनिराज को 6 माह बाद विधि पूर्वक आहार दान दिया तो उनका जग में नाम हुआ और उनका यश और कीर्ति पूरे विश्व में फैली। आचार्य श्री आगे बताते हैं आत्मा से भिन्न पदार्थों को समझे और त्याग करें विकृति को त्याग से दूर करें तभी भीतर आत्मा के गुण प्रकट होंगेमिथ्यात्व को हटाने से सम्यक दर्शन प्रकट होगा। बीजारोपण होता है तो पेड़ बनता है नदी समुद्र में जाती है। व्यक्ति भी अनुवत्री महावत्री बनता है दान त्याग से शांति मिलती है। दान देने से हर्ष प्राप्त होता है तृष्णा को जीतने से हमें खुशी मिलती है। अंत में आचार्य श्री ने मूल सूत्र बताया कि मुक्ति का कारण त्याग धर्म है।

अतः सभी को परिग्रह का त्याग करना चाहिए और जीवन को उन्नति के मार्ग पर लगाना चाहिए श्री त्याग धर्म की जय....

राजेश पंचोलिया इंदौर, वात्सल्य वारिधि भक्त परिवार

आत्म प्रक्षालक : दशलक्षण पर्व
प.पू. गणिनी आर्यिका शुभमति माताजी

उत्तम आकिन्चन: विकल्प का त्याग कर जो परम समाधी में लीन हो गये ऐसे उत्कृष्ट योगी के ही वास्तविकता में उत्तम आकिन्चन होता है।

यह उत्तम आकिन्चन धर्म कर्मो का क्षय कर परम शाश्वत सुख निर्वाण को प्रदान करता है अत : आप भी परिगरह का त्याग कर आकिन्चन भाव को धारणकर अपने आत्मा का कल्याण करें।